बाल कहानियां भाग–10

आजा होजा



मस्तराम कपूर

बाल कहानियां भाग-10

आजा-होजा

मस्तराम कपूर

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण फाल्गुन 1911 (मार्च 1990)

द्वितीय संस्करण शक 1921 (2000)

मूल्य: 22 रूपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, पटियाला हाउस, नई दिल्ली – 110001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली - 110001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली - 110001
- हाल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली - 110054
- कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, बालार्ड पायर, मुंबई - 400038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता - 700069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई - 600090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना - 800004
- प्रेस रोड, तिरूअनंतपुरम - 695001
- 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ - 226001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय, पब्लिक गार्डंस, हैदराबाद - 500004
- 'एफ' विंग, प्रथम तल, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलौर - 560034

विक्रय काउंटर ● पत्र सूचना कार्यालय

- 80, मालवीय नगर, भोपाल - 462003
- सी.जी.ओ. काम्प्लेक्स, 'ए' विंग, ए. बी. रोड, इंदौर, (म.प्र.)
- बी - 7, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर (राजस्थान)

मुद्रक: बी० एम० एस० प्रिन्टर एण्ड पब्लिशर्स, नई दिल्ली - 3

प्रकाशकीय

कहानियां बच्चों को सबसे अधिक आकर्षित करती हैं। यदि उनमें मनोरंजन के साथ-साथ कोई शिक्षा या प्रेरणा भी हो, तो उनकी सार्थकता और भी बढ़ जाती है।

किसी समय कहानियों में उपदेश अधिक होते थे। आज वह समय नहीं रह गया है। आज के वैज्ञानिक युग में बच्चों को सीधे-सीधे उपदेश पसंद नहीं है। विज्ञान और उससे जुड़ी अन्य जानकारियों ने उनके मानसिक स्तर को एक नया धरातल प्रदान किया है। किंतु इसके साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि बच्चों को सद्प्रवृत्तियों और स्वस्थ जीवन मूल्यों की ओर भी प्रेरित किया जाए। मनोरंजन को शिक्षा और प्रेरणा से जोड़ने का एक उपाय प्रेरक और शिक्षाप्रद कहानियों को रोचक और मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत करना भी है। ऐसी कहानियों को बच्चे आसानी से ग्रहण कर सकेंगे और लेखक भी अपने उद्देश्य में सफल होगा।

प्रकाशन विभाग का सदैव यही प्रयास रहा है कि अपने बाल पाठकों को मनोरंजन और शिक्षाप्रद कहानियां उपलब्ध कराई जाएं। इसी क्रम में 'बाल कहानियां' श्रृंखला का प्रकाशन हो रहा है। 'आजा-होजा' पुस्तक इसी श्रृंखला की एक और कड़ी है। इसके लेखक हैं श्री मस्तराम कपूर।

आशा है इन कहानियों से बच्चों का मनोरंजन होगा और साथ ही उन्हें स्वस्थ जीवन जीने की प्रेरणा मिलेगी।

निदेशक

विषय-सूची

दंड का पुरस्कार

जब से हैडमास्टर परसराम आए थे जोगिन्द्र नगर स्कूल की काया पलट ही हो गई थी। काया पलट, स्कूल के अंदर-बाहर की सफाई और कक्षाओं के अनुशासन तक सीमित नहीं थी, छात्रों के दिलों में भी एक नया उत्साह भर गया था। कारण यह था कि हैडमास्टर साहब छात्रों में घुल-मिल जाते थे। कक्षा की पढ़ाई को वह जितना महत्व देते थे, उतना ही महत्व खेल-कूद और दूसरी बाहर की गतिविधियों को भी देते थे।

स्कूल से लगभग चार किलोमीटर दूर मछियाल के मेले में स्काउट शिविर लगाने का जब उन्होंने फैसला किया तो सब छात्र खुशी से उछल पड़े। बैंडबाजे के साथ मार्च करते हुए लड़के वर्दियों में मेले की ओर चले। तीन घंटे का रास्ता था जो लड़कों ने पैदल ही तय किया और सारे रास्ते हैडमास्टर साहब उनके आगे-आगे रहे।



मछियाल मछलियों के ताल के लिए मशहूर है। नदी के लगभग एक किलोमीटर हिस्से में मछलियों का अभय-स्थल है। यहां कोई मछलियों को नहीं पकड़ सकता। मेले में हजारों लोग आते हैं और मछलियों को आटा खिलाते हैं।

नदी के किनारे मैदान में स्काउटों का शिविर लगा। नाश्ता तैयार हो रहा था और हैडमास्टर साहब कार्यक्रम की सूची बना रहे थे। महेश शिविर से निकलकर मछलियों को देखने के लिए नदी के किनारे आ गया। वह एक ऊंचे पत्थर पर बैठ कर मछलियों को आटा खिलाने लगा। जरा से आटे पर जब सैंकड़ों मछलियां एक साथ टूट पड़ती थीं तो वह दृश्य बहुत अच्छा लगता था। वह मछलियों को देखने में खो गया।

उधर हैडमास्टर साहब उसकी तलाश में परेशान हो रहे थे। सब लोगों ने नाश्ता कर लिया लेकिन महेश का पता नहीं था। आखिर हैडमास्टर साहब ने एक लड़के को बिगुल बजाने का आदेश दिया। बिगुल की आवाज सुनते ही महेश हड़बड़ाकर उठा। चलते-चलते उसे चुहल सूझी। उसने एक छोटी मछली पकड़ कर जेब में डाल ली। जब वह शिविर में पहुंचा तो स्काउट दरी पर बैठे हुए थे। बिना पूछे शिविर से बाहर जाने के लिए उसे हैडमास्टर साहब ने तीस बार उठने बैठने की सजा दी। जब वह उठक-बैठक कर रहा था तो मछली उसकी जेब से उछल कर बाहर आ गई। चारों ओर से हंसने की आवाज आई। हैडमास्टर साहब भी पहले तो हंसे लेकिन बाद में उन्होंने सवाल किया — "मछली कहां से पकड़ लाए?"

महेश डरते-डरते बोला, "मैं मछलियों को आटा खिला रहा था। एक मछली उछल कर मेरी जेब में आ गई। मुझे पता ही नहीं चला।"

इस बार हंसने की आवाज और भी जोर से आई। लेकिन हैडमास्टर साहब गरज कर बोले, "एक तो कसूर करते हो और फिर झूठ बोल कर उसे छिपाते हो?"

महेश ने देखा कि बहाना बनाने की कला में वह बिल्कुल बुद्धू है। उसे दंड दिया गया कि वह बिना नाश्ता किए शिविर की सीमा से बाहर रेत के ढेर पर खड़ा रहे। स्काउटों के नए-नए खेल चल रहे थे। मेले में आए लोग शिविर के आसपास खड़े होकर तमाशा देख रहे थे। जब कोई बहुत अच्छा कार्यक्रम होता तो लोग तालियां बजाकर अपनी प्रसन्नता जाहिर करते थे। कार्यक्रम खत्म हुआ। सब लड़के भोजन के लिए इकट्ठे हुए लेकिन महेश की किसी को याद नहीं आई। शायद हैडमास्टर साहब भी महेश को भूल चुके थे। महेश शिविर की ओर एकटक देखता रहा कि कोई लड़का उसे बुलाने आएगा। किंतु कई घंटे बीत गए और कोई उसे बुलाने नहीं आया।

कड़ी धूप में उसका चेहरा मुरझा गया। प्यास से उसके होंठ सूख गए। भूख से बुरा हाल था। एक बार तो उसके मन में विचार आया कि शिविर में चल कर कुछ खाना-पीना चाहिए लेकिन फिर कर्त्तव्य की बात सोचकर वह अपनी जगह खड़ा रहा। एक सज्जन उसके पास से गुजरे। महेश को देखकर रुक गए और उसके चेहरे को देखने लगे। उन्होंने पूछा—"बेटा, मैं तुम्हें बड़ी देर से यहां देख रहा हूं। क्या तुम किसी की राह देख रहे हो?"



महेश ने बताया कि वह स्काउट है और हैडमास्टर साहब ने उसे यहां ड्यूटी पर तैनात किया है। वह सज्जन वहां से चले गए तो महेश ने मन में सोचा कि उसे चलकर हैडमास्टर साहब से माफी मांग लेनी चाहिए। लेकिन दूसरे ही क्षण उसने उस विचार को मन से निकाल दिया। उसने जेब टटोली। एक भी पैसा जेब में नहीं था। पैसे थैले में रह गए थे और थैला शिविर में था। उसके पास ही पूरी-चने वाले का खोमचा था। कई लोग वहीं खड़े-खड़े पूरी खा रहे थे। महेश के मुंह में पानी भर आया लेकिन वह कर ही क्या सकता था। उसने मुंह दूसरी तरफ फेर लिया।

जब धूप ढलने लगी तो महेश ने देखा कि स्काउटों का एक दल उसकी ओर चला आ रहा है। महेश की समझ में नहीं आया कि मामला क्या है ? हैडमास्टर साहब सबसे आगे थे और उनके साथ वह सज्जन थे जो कुछ देर पहले हमदर्द बनकर उससे सवाल कर रहे थे। महेश ने सोचा, हैडमास्टर साहब अब किसी और कसूर के लिए और बड़ी सजा देंगे। लेकिन हैडमास्टर साहब ने पास आकर महेश को छाती से लगा लिया। उनकी आंखें भीग गई थीं। बड़े प्यार से वह बोले, "बेटा महेश, मुझे माफ करो। मैं तो तुम्हें भूल ही गया था।" महेश मन ही मन लज्जित हो रहा था क्योंकि हैडमास्टर साहब उससे माफी मांग रहे थे। उससे कोई उत्तर नहीं बन पड़ा और वह हैडमास्टर के चेहरे की तरफ देखता भर रहा। "तुम्हें मैंने बहुत दंड दिया लेकिन अब उस दंड को पुरस्कार समझो।"

महेश अपना सब दुख भूल गया क्योंकि स्कूल के सब लड़के अच्छे स्काउट के रूप में उसे आदर की दृष्टि से देखने लगे।

सिपाही

रमेश दिल्ली में रहता था और गरमी की छुट्टियों में जब अपने गांव जाता था तो दोस्त उसे घेर लेते थे। वह उन्हें दिल्ली की कई कहानियां सुनाता था और नई-नई बातें बताता था।

एक बार रमेश ने कहा कि हम 26 जनवरी की परेड का खेल खेलेंगे। गांव के लड़कों ने 26 जनवरी की परेड के बारे में पढ़ा तो था किंतु उस दृश्य को किसी ने देखा नहीं था। दूर-दराज के उस गांव में अभी टेलीविजन भी नहीं आया था। रमेश ने बताया कि एक लड़का राष्ट्रपति बनकर सलामी लेगा और बाकी लड़के सैनिक दस्तों की तरह कतार बांध कर राष्ट्रपति के सामने से गुजरेंगे। रमेश ने सब लड़कों को एक कतार में खड़ा किया और सारी बातें समझाने लगा। वह बोला, "देखो, यहां झंडा लेकर एक सिपाही खड़ा होगा और यहां राष्ट्रपति खड़े होंगे। बाकी सब लड़के मार्च करते हुए आएंगे। झंडे के पास आकर वे अपनी गर्दन अकड़ा कर राष्ट्रपति की ओर देखेंगे और चलते रहेंगे। राष्ट्रपति फौजी सलाम की मुद्रा में अपनी जगह खड़े रहेंगे।"

जब सब समझ गए तो खेल के पात्रों का चुनाव होने लगा। प्राण नाम के लड़के को राष्ट्रपति बनाया गया क्योंकि वह सबसे लम्बा था। रमेश को सेना का कमांडर बन कर परेड के आगे-आगे चलना था।

"झंडे वाला सिपाही मैं बनूंगा।" विनोद ने आगे बढ़कर कहा।

"हां, सिपाही की बात तो हम भूल ही गए थे।" रमेश बोला, 'चलो, तुम सिपाही बन जाओ। लेकिन जानते हो सिपाही की कितनी बड़ी जिम्मेदारी होती है। तुम झंडे के रखवाले होओगे और झंडा देश की शान होता है। झंडा गिर गया या झुक गया तो यह देश की शान के खिलाफ होगा। बड़ी होशियारी से काम लेना पड़ेगा तुम्हें।"

"मैं सब कुछ समझ गया।" विनोद बोला।



"तो खड़े हो जाओ अपनी जगह पर। यह लो लाठी और यह रहा तुम्हारा झंडा" कहते-कहते रमेश ने कृष्ण के सिर से टोपी उतारी और लाठी के ऊपर लटका दी।

परेड की पूरी तैयारी हो गई। प्राण राष्ट्रपति बनकर अपनी जगह खड़ा हो गया और सब लड़के पंक्ति में रमेश के पीछे खड़े हो गए। लड़कों को दूर से मार्च करते हुए आना था। रास्ते से गुजरने वाले कई लोग भी बच्चों का खेल देखने के लिए रुक गए थे।

परेड शुरू हुई। लड़के तीन-तीन की पंक्तियों में रमेश के साथ कदम मिलाते हुए लेफ्ट-राइट, लेफ्ट-राइट करते हुए बढ़े आ रहे थे। राष्ट्रपति अपनी जगह पर सावधान खड़े थे और विनोद झंडे को दोनों हाथों में मजबूती से पकड़े हुए था। झंडे से दस कदम दूर से ही रमेश ने दाहिना हाथ माथे तक ले जाकर आज्ञा दी, "दाएं देखो।" लड़के गर्दन अकड़ा कर दाईं ओर देखते हुए आगे बढ़ने लगे। इतने में हवा का एक तेज झोंका आया और लाठी के ऊपर रखी हुई टोपी उड़कर दूर जा गिरी।

विनोद को लगा कि जैसे उसके मुंह पर किसी ने जोर से चांटा मार दिया हो। उसे अपनी लापरवाही पर गुस्सा आया। देखा कि किसी का ध्यान इस ओर नहीं गया किंतु वह झंडे का अपमान कैसे देख सकता था। वह टोपी पकड़ने के लिए लाठी छोड़कर भागा।

दूसरे लड़के उसी तरह अपना खेल खेलते रहे। शायद वे सोच रहे थे कि टोपी उड़ी तो क्या हुआ। विनोद उसे ले आएगा और खेल चलता रहेगा। लेकिन विनोद के लिए टोपी नहीं उड़ी थी, झंडा उड़ा था। वही झंडा जिसकी रक्षा की जिम्मेदारी उसे सौंपी गई थी।

हवा तेज चल रही थी और टोपी आगे-आगे उड़ी जा रही थी। विनोद भी उसके पीछे-पीछे भागा जा रहा था। यहां तक कि वह मैदान से दूर निकल गया। अब वह खेतों में दौड़ रहा था। जब तक वह टोपी के निकट पहुंचता हवा उसे और दूर उड़ा ले जाती। उसकी सांस फूलने लगी। पसीने से उसके कपड़े भीग गए किंतु वह टोपी के लिए भागता रहा।

खेत का फैलाव भी खत्म हो गया। अब सामने घना जंगल था। टोपी विनोद को तंग करने के लिए कमर कसे हुए थी। वह जंगल में घुस गई। विनोद ने भी उसका पीछा नहीं छोड़ा। वह भी झाड़ियों में घुस गया।

उधर दूसरे लड़कों ने जब विनोद को बड़ी देर तक लौटते नहीं देखा तो वे उसे आवाजें लगाने लगे। लेकिन जंगल तक आवाज कहां पहुंचती। एक दो लड़के कुछ दूर जाकर उसे देख भी आए। जब उसका कहीं पता नहीं लगा तो वे यह सोच कर निश्चिंत हो गए कि वह घर चला गया होगा।

इधर विनोद झाड़ियों में घुस-घुसकर टोपी का पीछा कर रहा था। अंधेरा घिरने लगा। विनोद को जंगली जानवरों का डर भी सताने लगा। लेकिन जब तक उसका झंडा नहीं मिलता वह वापस कैसे आ सकता था। टोपी झाड़ियों में कहीं खो गई थी। कांटों से उसके कपड़े फट गए। उसके जिस्म पर भी कई खरोंचें आईं। उसने चाहा कि जी भर के रोए लेकिन वहां रोने से क्या मिलता ? टोपी को खोजे बिना वह घर जाने के लिए तैयार नहीं था।

बड़ी देर बाद उसने देखा कि टोपी एक ऊंचे पेड़ पर लटकी हुई है। वह उस पेड़ के निकट पहुंचा। पेड़ का तना इतना मोटा था कि उस पर चढ़ना विनोद के लिए बिल्कुल नामुमकिन था। उसने कोशिश की लेकिन बार-बार वह फिसल कर नीचे आ जाता था। इतने में किसी की आवाज आई—

"कौन हो तुम ?"

विनोद ने देखा रमेश के पिता ठाकुर हरीसिंह हाथ में बंदूक लिए खड़े थे।



"अरे विनोद, तुम यहां रात के वक्त क्या कर रहे हो ?"

विनोद ने बताया कि उसका झंडा उड़ कर यहां आ गया था और पेड़ पर जा लटका है।

"कैसा झंडा ?" ठाकुर हरीसिंह ने कड़क कर कहा।

विनोद ने सारी कहानी सुना दी। ठाकुर हरीसिंह कहानी सुनकर खूब जोर से हंसने लगे। फिर विनोद की पीठ ठोंक कर बोले, "शाबाश बेटे, तुम सच्चे सिपाही हो। आओ, मैं उतार देता हूं तुम्हारे झंडे को।"

ठाकुर साहब ने बंदूक की नली से टोपी उतार कर विनोद को दे दी। फिर अपने साथ घोड़े पर बिठा कर वह उसे खेल के मैदान में ले गए। वहां रमेश अपनी कहानी सुना रहा था और लड़के उसकी कहानी में खोए हुए थे। इतने में ठाकुर हरीसिंह विनोद के साथ घोड़े से उतरे। सब लड़के उन्हें देख कर चुप हो गए।

ठाकुर साहब बोले, "तुम जानते हो तुम्हारे इस सिपाही ने आज कितनी बहादुरी दिखाई है ? इसने झंडे के लिए अपनी जान जोखिम में डाली। झाड़ियों में उलझ कर इसका शरीर छिल गया किंतु इसने झंडे की रक्षा की। यह सच्चा सिपाही है। मैं इसे सैनिक स्कूल में भरती कराऊंगा। कल ही मैं इस बारे में विनोद के पिता से बात करूंगा।" और विनोद को एक बार फिर शाबाशी देकर ठाकुर हरीसिंह घोड़े पर बैठ कर चल दिए।

आजा-होजा

आजा-होजा, देव और अमर की नई सूझ थी। अपने साथियों के बीच जब वे इसका चमत्कार दिखाने लगते तो साथी ठगे से उन्हें देखते रहते थे किसी की समझ में नहीं आता था कि यह आजा-होजा क्या चीज है। देव और अमर अपने साथियों के पूछने पर बस मुस्करा देते थे लेकिन किसी को इसका ठीक-ठीक अर्थ नहीं बताते थे।

आजा-होजा की सिद्धि एक दिन उन्हें अचानक मिल गई थी। वे खिड़की के पास खड़े आकाश में बादलों की दौड़ देख रहे थे। देव ने उस समय अपने छोटे भाई अमर के गले में दाहिना हाथ डाल रखा था। दोनों उस दिन उदास थे क्योंकि पिछले कुछ दिनों से सारे घर में उदासी थी। मां बीमार थी। पिता पैसों के लिए दौड़धूप कर रहे थे, ताकि मां को किसी अस्पताल में दिखाया जा सके।

देव ने अपनी नजर बादलों से हटाई और अमर से कहा, "अमर, मुझे वह थाली मिल जाए जिससे जो मांगो वह मिल जाता है, तो मैं अभी रुपये मांग कर पिताजी की सारी चिंताएं दूर कर दूं।"

देव बोला, "मैं कहूं आजा एक लाख सोने की मोहरें और फिर उन्हें सारे मोहल्ले में बांटू ताकि कोई गरीब न रहे।"



अमर—"मैं कहूंगा होजा शहर का स्वर्गलोक, होजा देव का इन्द्र देवता और होजा अमर का..."
देव—"होजा अमर का अमर गुरू वृहस्पति।"

और दोनों भाई खिलखिला कर हंस पड़े। आजा-होजा की कल्पना में उनकी उदासी डूब गई। यही आजा-होजा के आविष्कार की कहानी है।

उस दिन के बाद उन दोनों में आजा-होजा की अक्सर होड़ लगी रहती थी। देव आजा से काम बनाना चाहता था और अमर होजा से उसकी कमियों को दूर करना चाहता था। दोनों सिद्धियां एक दूसरे की पूरक थीं।

किंतु एक दिन जब वे छुट्टी के बाद दोस्तों से घिरे हुए स्कूल से बाहर निकले तो दोनों का आपसी मनमुटाव साफ दिखाई देता था। उस दिन पार्वती काकी की भेजी हुई मिठाई स्कूल में बांटी गई थी। साथ में प्रत्येक लड़के को दो-दो रुपये भी दिए गए थे।

पार्वती काकी शहर भर में अपने दान पुण्य के लिए प्रसिद्ध थी, लाखों की मालकिन थी लेकिन बेचारी थी इस संसार में अकेली। वह इस धन को किसी अच्छे काम में लगाकर शांति प्राप्त करना चाहती थी। उसके पैसे से कई स्कूल चल रहे थे। देव और अमर ने पार्वती काकी को कभी देखा तो नहीं था किंतु उसकी भेजी हुई मिठाई खूब खाई थी।

देव का कहना था कि चारों रुपये गुल्लक में डाल देंगे। अमर का सुझाव था कि दो गुल्लक में डालें और दो खर्च कर लें। बात साधारण थी किंतु देव अकड़ गया और अमर भी अपनी बात पर अड़ गया।

स्कूल के साथियों से घिरे हुए दोनों चुपचाप चल रहे थे। साथी उन के अचानक परिवर्तन को देखकर चकित थे। उन सबकी इच्छा आजा-होजा की प्रश्नोतरी सुनने की थी। आजा से न कुछ होता था और न होजा से कुछ होता था, पर बहस मजेदार होती थी। यही उनके लिए काफी मजेदार चीज थी। बात शुरू करने के लिए विनोद नाम के एक लड़के ने आकाश की ओर देखा और कहा — "आजा दस रुपये।"

अमर जैसे विरोध करने का अवसर ढूंढ रहा था। उसने यह भी नहीं देखा कि आजा किसने कहा है। वह झट से बोल उठा—
"होजा रुपयों की मिट्टी।"
अब तो देव को भी तैश आ गया, बोला—
"आजा एक लाख रुपए।"
होजा रुपयों की चीटियां।" अमर ने उसका जवाब दिया।
और बहस शुरू हो गई—

"आजा घोड़ा।"
"होजा मकौड़ा।"
"आजा लकड़ी।"
"होजा मकड़ी।"
"आजा डंडा।"
"होजा ठंडा।"

अमर के प्रत्येक उत्तर पर लड़के जोर से हंस पड़ते थे। देव ने इसे अपनी हार मान लिया। जब उससे कोई बात नहीं बन पड़ी तो वह गुस्से से भर कर अकेला ही एक ओर चल दिया। अमर को लगा कि वह सचमुच नाराज हो गया है इसलिए वह भी लड़कों से अलग होकर देव के पीछे चलने लगा। देव घर की तरफ जाने के बजाय शहर से बाहर जाने वाली सड़क पर चला जा रहा था। अमर भी चुपचाप उसके पीछे चलता रहा।

न जाने कितनी देर तक वे दोनों उस सड़क पर चुपचाप चलते रहे। दोनों में करीब दस कदम का अंतर रहता था। अमर देव से माफी मांगना चाहता था लेकिन वह आगे बढ़कर उससे बात नहीं कर सकता था। देव कभी-कभी मुड़कर अमर को देख लेता था और फिर तेजी से दो चार कदम आगे बढ़ जाता था।

काफी दूर चलने पर देव ने सामने से एक बुढ़िया को आते देखा। उस बुढ़िया ने खद्दर के सफेद कपड़े पहने थे और वह लकड़ी का सहारा लेकर चल रही थी। देव ने घूमकर पीछे की ओर देखा और फिर तेजी से चार कदम आगे की ओर बढ़ाए। ऐसा करते समय वह बुढ़िया से टकरा गया। बुढ़िया गिर पड़ी तो देव ने खीझकर कहा — "देखकर नहीं चलती, अंधी है क्या ?"

बुढ़िया बोली, "हां मैं अंधी हूं लेकिन तुम तो आंखों वाले हो।' उसकी बात सुनकर देव को बड़ा दुख हुआ। उसका सारा क्रोध काफूर हो गया। मन ही मन वह बहुत शर्मिंदा हुआ। अमर दस कदम दूर से ही यह सब देख रहा था। जब उसने सुना कि बुढ़िया अपने को अंधी कह रही है तो उसे बड़ा अचरज हुआ। तभी देव ने बुढ़िया से कहा— "माफ करना काकी, मुझसे गलती हो गई"

"कौन काकी ?" बुढ़िया ने पूछा, "मैं एक अंधी गरीब भिखारिन तुम्हारी काकी कैसे हो सकती हूं ?"

उसकी बात सुनकर देव को बड़ी हैरानी हुई। उजले-धुले कपड़ों में वह भिखारिन बिल्कुल नहीं लगती थी। देव ने सोचा किसी ने बुढ़िया पर दया करके ये कपड़े दे दिए होंगे। उधर दूर खड़े अमर का दिल भी उसे भिखारिन मानने को तैयार नहीं था।

कुछ देर बाद देव ने पूछा, "अच्छा काकी, तुम शहर से बाहर इतनी दूर कैसे आई थीं ? कहां गईं थीं तुम ?"

बुढ़िया मुस्करा कर बोली, "बेटा, यहां पास ही एक बावड़ी है, वहीं गई थी।"

"बावड़ी पर क्या करने गई थीं काकी ?" देव ने हैरान होकर पूछा, "वहां तो तुम्हें एक पैसा भी नहीं मिल सकता। वहां कोई आता ही नहीं।" बुढ़िया कुछ देर सोचती रही फिर बोली, "बेटा, हर मंगलवार को यहां कुछ लोग आते हैं जो मुझे दो-चार आने दे जाते हैं।"

"आज कितने मिले ?" देव ने पूछा।
"आज तो एक भी पैसा नहीं मिला।"
"क्यों, किसी ने नहीं दिए ?"
"नहीं बेटा, मुझे आज वह बावड़ी ही नहीं मिली।"

अमर कुछ दूर खड़ा बातें सुन रहा था। उसने देव की ओर कुछ इशारा किया। देव इशारा समझ गया और बुढ़िया से बोला—

"आओ काकी, मैं तुम्हें उस जगह पर पहुंचा दूं।"

बुढ़िया चुपचाप देव का हाथ पकड़कर चलने लगी। अमर भी दबे पांव पीछे-पीछे चलने लगा। अभी तक बुढ़िया का ध्यान अमर की ओर नहीं गया था। क्योंकि न तो उसने कोई शब्द कहा था और न आहट की थी। वह सोच रहा था कि बुढ़िया की आंख देखने में कितनी उजली लगती है। कुछ देर की चुप्पी के बाद बुढ़िया ने पूछा

"बेटा, तुम्हारा नाम क्या है ?"

"मेरा नाम देव है काकी।"

"किसके लड़के हो तुम ?"

"मेरे पिता का नाम रामदास है काकी।"

"तुम्हारा घर कहां है ?"

"नहर के पास !" बातें चल रही थी कि फूलों की खुशबू से भरा हवा का एक झोंका आया। बुढ़िया का चेहरा खिल उठा। "बावड़ी आ गई", उसके मुंह से निकला। देव और अमर ने देखा कि पास ही मालती के कुंजों से घिरी हुई बावड़ी है। लेकिन जब उन्होंने वहां पर कोई आदमी नहीं देखा तो दोनों के चेहरों पर उदासी घिर आई।

बुढ़िया बोली, "बेटा अब तुम जाओ।"

लेकिन देव वहीं पर खड़ा रहा, "काकी मैं तुम्हें घर पहुंचा दूंगा।"

"नहीं नहीं बेटा," बुढ़िया कहने लगी. "मैं अपने आप चली जाऊंगी। तुम जाओ। मुझे यहां बड़ी देर तक रुकना पड़ेगा।"

देव की समझ में नहीं आया कि काकी बड़ी देर तक रुक कर यहां क्या करेगी। यहां न तो कोई आदमी था और न किसी के आने की उम्मीद थी। वह अमर के पास गया। काकी के बारे में वह अमर से कुछ बातें करना चाहता था किंतु झगड़े के कारण दोनों में बोल-चाल बंद थी। कुछ देर चुपचाप खड़े रहने के बाद देव को ही बात शुरू करनी पड़ी, "काकी को यहां एक पैसा भी नहीं मिलेगा," वह बोला।

"हां, ..." अमर भी बोला।

कुछ देर इस समस्या पर विचार करने के बाद अमर ने अपनी जेब से दो रुपये निकाले और देव से दो रुपये मांगने के लिए हाथ फैला दिया। देव ने भी चुपचाप रुपये अमर के हाथ पर रख दिए। अब अमर दबे पांव आगे बढ़कर काकी के पास पहुंच गया। चार रुपये काकी के हाथ पर रखते हुए अमर ने बनावटी स्वर में कहा—

"अरी बुढ़िया, आज तुम्हें देर कैसे हो गई ? क्या रास्ता भूल गई थी ?" अमर ने हाथ के पैसे बुढ़िया के हाथ पर गिराए ही थे कि बुढ़िया ने उसका हाथ पकड़ लिया। अमर की कलाई पर हाथ फेरते हुए काकी बोली, "मुझसे छल करते हो ? बताओ तुम कौन हो ?"



काकी ने फिर कहा, "बोलते क्यों नहीं ? तुम कौन हो ?" देव अब चुप नहीं रह सका, वह बोला, "काकी यह मेरा छोटा भाई अमर है। इधर आदमी तो कोई नहीं था। हमने सोचा तुम्हें बड़ी निराशा होगी इसीलिए हमें यह चाल चलनी पड़ी। अच्छा अब ये रुपये ले लो।"

"रुपये ?" काकी के चेहरे पर चमक आ गई लेकिन दूसरे ही क्षण वह बोली— "लेकिन तुम्हारे पास ये रुपये आए कहां से ? घर वालों ने कागज-कापी खरीदने के लिए दिए होंगे।"

देव ने कहा, "काकी, हमारे स्कूल में आज पार्वती काकी की भेजी हुई मिठाई बंटी थी। मिठाई के साथ हर एक लड़के को दो-दो रुपये भी मिले। अब काकी, पैसे तो झगड़े की जड़ होते हैं। हम दोनों में इस बात पर झगड़ा हो गया कि इन्हें कैसे खर्च किए जाए। अच्छा हुआ तुम मिल गईं। इन्हें तुम ले लोगी तो हमारा झगड़ा भी खत्म हो जाएगा।"

काकी सोच में पड़ गई। कुछ देर सोचने के बाद उसने रुपये ले लिए और फिर उनके साथ वापस चली आई। रास्ते में तीनों चुपचाप चलते रहे। बड़ी सड़क पर आकर उसने यह कह कर विदा ली कि मैं अब सीधी सड़क से अपने घर चली जाऊंगी।

जब काकी दूर चली गई तो देव ने अमर की ओर देखा और मुस्कराकर बोला, "आजा काकी के लिए घोड़ा-गाड़ी।"

अमर बोला, "होजा काकी की आंखें अच्छी।" और दोनों खिलखिला कर हंस पड़े।

किंतु दूसरे ही क्षण एक तांगे वाला वहां से गुजरा। काकी ने उसे रुकवाया और बिना किसी सहारे के उस पर चढ़ कर बैठ गई। देव और अमर अपनी सिद्धि की करामात देख कर खुद ही अचरज में पड़ गए।

अभी काफी समय था अत: वे इधर-उधर घूमने लगे। जब वे घर पहुंचें तो शाम हो चुकी थी। कमरे में खाट पर दरी बिछी थी और उस पर एक बूढ़ी स्त्री बैठी हुई थी। पास ही काले कोट वाला एक आदमी खड़ा था। और फर्श पर बैठे थे अमर तथा देव के माता-पिता।

दरवाजे के बाहर से ही उन्होंने खाट पर बैठी बुढ़िया को देखा तो दोनों सन्न रह गए। खाट पर काकी बैठी थी। वह उनके पिता से कह रही थी, "उस बावड़ी की जगह बहुत अच्छी है। कभी-कभी जब मैं परेशान होती हूं तो वहां चली जाती हूं। मुझे वहां बड़ी शांति मिलती है। आज तो तुम्हारे लड़कों से मिलकर मेरा मन बहुत हल्का हो गया। उन्होंने मुझे अंधी भिखारिन समझ लिया और मैं भी कुछ देर के लिए भिखारिन ही बन गई। वे एक नाटक खेलने लगे और मुझे भी उस नाटक का एक पात्र बनने में बड़ा मजा आने लगा।"

इतने में देव और अमर कमरे में आ गए। उनके पिता ने कहा-"इधर आओ बेटा। पार्वती काकी के पांव छुओ।"

दोनों के मुंह से एक साथ निकला, "पार्वती काकी।" और पार्वती काकी ने उठकर दोनों को अपने पास खींच लिया। फिर काले कोट वाले आदमी की तरफ देख कर वह बोली, "वकील साहब मेरी सम्पत्ति की देखभाल ये दोनों लड़के करेंगे। फिर वह रामदास की ओर देख कर बोली, "रामदासजी इन लड़कों की शिक्षा का भार आज से मेरे ऊपर है।" और यह कह कर काकी काले कोट वाले आदमी के साथ बाहर चल दी।

भूत-विदाई

अरुण अब बच्चा नहीं था। वह नौ साल का हो गया था। यदि घर पर उसे कोई बच्चा कहता तो उसे बड़ा गुस्सा आता था। इसके कई कारण थे। उसने पुस्तकों में पढ़ा था और बड़े लोगों से भी सुना था कि बच्चों को किसी बात की चिंता नहीं होती। किंतु वह देखता था कि उसका जीवन चिंताओं से घिरा रहता है। सबसे बड़ी चिंता तो उसे यह थी कि उसके पास कोई ऐसा गुण या चमत्कार नहीं था जिसके कारण घर, गांव या स्कूल में उसकी पूछ होती।

गांव के कितने ही लोग थे जिनसे अरुण को ईर्ष्या होती थी। पंडित दुर्गादास शंख बजाने में उस्ताद था। जब वह शंख बजाता था तो सुनने वालों के दिल धक-धक करने लगते थे। जहां कहीं कोई पूजा-पाठ होता दुर्गादास को बुलाना ही पड़ता था। देवकीनंदन हर रोज मंदिर में जाकर एक घंटा अमरकोष के श्लोक पढ़ता था और गांव वाले उसे बहुत अच्छा भक्त और संस्कृत का प्रकांड पंडित मानते थे। बूढ़ा मिरासी बूटा आसपास के गांवों में नगाड़ा बजाने के लिए प्रसिद्ध था। हरिया मंत्र-तंत्र जानता था और बड़े से बड़े भूत को भी कील कर नीचे गाड़ सकता था।

अरुण इन सब लोगों से सब बातें सीख कर सबसे बड़ा बनना चाहता था। उसने पंडित दुर्गादास से शंख बजाना सीखा। देवकीनंदन की बराबरी करने के लिए अमरकोष के एक अध्याय को पूरे का पूरा रट लिया। हरिया से कुछ जादू-मंत्र सीख कर वह दोस्तों को चकित भी करने लगा।

किंतु उसकी सबसे बड़ी चिंता अब यह थी कि भूत के भय पर काबू कैसे पाया जाए। गांव के अंदर और बाहर बहुत से ऐसे स्थान थे जहां भूतों का वास माना जाता था। सच बात यह थी कि जिन-जिन स्थानों पर अरुण अकेले या अपने दोस्तों के साथ जाना चाहता था, वहां कोई न कोई भूत भी रहता ही था।

उदाहरण के लिए गांव के बाहर आम का एक बहुत बड़ा पेड़ था। उसके आम मिश्री की तरह मीठे होते थे, इसलिए उसका नाम मिसरू आम पड़ गया था। आमों के मौसम में इस पेड़ के नीचे सबसे अधिक आम मिलते थे। रात के समय सैकड़ों आम गिरते थे और जो सुबह तड़के वहां पहुंच जाते थे उनके थैले आमों से भर जाते थे। अरुण उस पेड़ के नीचे सुबह तड़के या अंधेरे में नहीं जा सकता था। बात यह थी कि उस पेड़ पर पहाड़िया भूत रहता था। यह भूत सफेद कपड़े पहनता था और पेड़ पर बैठ कर हुक्का पीता रहता था।

इसी प्रकार गांव से कोई आधा मील दूर तैरने के लिए एक बहुत सुंदर तालाब था। उसका नाम सूरजकुंड था। गरमी के दिनों में अरुण और उसके साथी उस कुंड में तैरने के लिए तरसते थे। लेकिन उस तालाब में एक बेताल रहता था। गांव के बीचों-बीच एक मैदान था जहां शाम के समय लड़के खेलने के लिए इकट्ठे होते थे। बेचारा अरुण इस मैदान में भी नहीं जा सकता था क्योंकि वहां से घर लौटने के लिए उसे बांसों के एक झुरमुट को पार करना होता था। इस झुरमुट में रात के समय कई लोगों को भूत मिल चुका था।

गांव में केवल एक आदमी था जो अरुण को भूत से रक्षा करने का मंत्र बता सकता था। वह था गांव का चौधरी बाबा शिवदयालु। किंतु अरुण उनके पास जाने से डरता था। गांव के सभी लड़के बाबा शिवदयालु से घबराते थे। जब कभी वह रास्ते में उनके हाथ पड़ जाते तो उनके कान जरूर खींचे जाते। यदि लड़के उनके सामने आज्ञाकारी बनकर खड़े रहें और सब प्रश्नों का उत्तर दे दें तो भी कान खींचने का कोई न कोई बहाना निकल ही आता। यदि लड़के जोर-जोर से बातें करते मिलते तो बाबा शिवदयालु कहते "क्या आसमान सिर पर उठा रखा है।" और यदि कोई लड़का चुपचाप बैठा दिखाई देता तो कहते "क्या मुर्दनी सूरत लिए बैठे हो, हंसते-खेलते क्यों नहीं ?" इस प्रकार चित्त भी उनकी होती थी और पट भी।

प्राय: वह रास्ते में लड़कों को रोक कर कविता सुनाने के लिए कहते। लड़के को सिपाही की तरह सीधे खड़े होकर कविता सुनानी पड़ती थी। जिसे सिर्फ सिनेमा का गाना ही याद होता था उसे तो कान खींचकर गधा बना दिया जाता था। बाद में लड़कों को मिठाई या फल या एकाध आना जरूर मिलता था किंतु कान खिंचाई के साथ जुड़ा होने के कारण उसका सारा मजा किरकिरा हो जाता था।



लम्बा कद, गठा हुआ शरीर, बड़ी-बड़ी मूछें, घुटनों तक लम्बी सफेद धोती, सिर पर भारी सी सफेद पगड़ी और पैरों में पड़े जूते। इस वेशभूषा में बाबा शिवदयालु से गांव के सभी लड़के डरते थे और उन्हें अपना हीरो भी मानते थे। लड़के उन्हें भूतों का गुरू कहते थे। कारण यह था कि जब कोई उन्हें भूत का कोई किस्सा सुनाता था तो वह उस भूत से दो-दो हाथ करने के लिए तैयार हो जाते थे। उन्होंने कई रातें भयानक स्थानों में बैठकर भूत के इंतजार में बिताई थी। किंतु आज तक उन्हें कोई भूत नहीं मिला था। लड़कों को और गांव के कई बड़ों को भी यह विश्वास था कि बाबा शिवदयालु भूत भगाने का मंत्र जानते हैं।

अरुण को इस तरह के मंत्र की बहुत जरूरत थी। वह उस मंत्र-शक्ति को प्राप्त करने के लिए कड़ी से कड़ी साधना कर सकता था। सात साल की उम्र में उसका जनेऊ हुआ था, तब पुरोहित ने सात बार उसके कानों में गायत्री मंत्र पढ़ा था। लेकिन इस गायत्री मंत्र को रट लेने पर भी अरुण के मन से भूत का भय दूर नहीं हुआ था। अरुण बाबा शिवदयालु के पास जाकर कान खिंचवाने का खतरा भी उठा सकता था। किंतु उसे यह भी डर था कि वह उसकी बात को हंसी में उड़ा देंगे और कान उमेठने के बाद उसे भगा देंगे।

एक दिन उसकी सारी समस्या अचानक हल हो गई। वह पास के गांव में मेला देखने गया था। उसके साथ माता-पिता, छोटी बहन शीला तथा गांव के और भी लोग थे। किंतु उसे तो कुश्तियों का तमाशा देखना था इसलिए वह सबसे अलग होकर अकेला ही घूम रहा था। उसकी मुट्ठी में दो आने थे जिनसे वह कोई अच्छी चीज खरीदना चाहता था।

मेले में घूमते-घूमते उसकी नजर एक दुकान पर पड़ी जिसमें छोटी-छोटी पुस्तकें सजा कर रखी हुई थीं। इनमें गानों की चौपाइयों से लेकर धार्मिक कहानियों तक की तरह-तरह की पुस्तकें थीं। अर्जुन, भीम, लव-कुश आदि के चित्रों वाली सभी पुस्तकों को वह लेना चाहता था किंतु दो आने में वह एक ही पुस्तक खरीद सकता था। काफी सोच-विचार के बाद उसने अपने सबसे बलवान योद्धा हनुमान की पुस्तक खरीद ली। पुस्तक के लेखक थे गोस्वामी तुलसीदास और उसका नाम था हनुमान चालीसा।

मेले से लौटते समय उसने अपनी प्यारी पुस्तक का एक पन्ना खोला और चौपाई पढ़ने लगा। उसकी नजर एक पंक्ति पर पड़ी जिसमें लिखा था "भूत पिशाच निकट नहीं आवै महावीर जब नाम सुनावै" जिसे पढ़ते ही वह खुशी से उछल पड़ा और घर की ओर तेजी से भागा। घर पहुंच कर उसने सबसे पहला काम यह किया कि पुस्तक को शुरू से आखिर तक पढ़ डाला।

जिसे वह इतने दिनों से ढूंढ रहा था वह उसे अचानक दो आने की पुस्तक में मिल गया। उसने देखा कि हनुमान चालीसा तमाम कष्टों से मुक्ति दिलाने वाली है। दो दिन में ही उसने सारी कविता को कंठस्थ कर लिया।

अब वह उस पुस्तक के चमत्कार की अनेक कहानियां सुनने लगा। किसी ने कहा कि आधी रात के समय पानी में खड़े होकर जो इसका सात बार पाठ करता है उसे हनुमान जी के दर्शन होते हैं। एक आदमी ने कहा कि रोज सात बार इसका पाठ करने से जीभ पर सरस्वती का वास हो जाता है। फिर वह आदमी जो कुछ कहता है सच हो जाता है। उसके सामने और भी सुझाव आए लेकिन वह इतनी कठिन साधना नहीं कर सकता था। उसके लिए तो वे पंक्तियां ही काफी थीं जिनके बोलने से भूत दुम दबाकर भाग जाता था।

एक दिन उसने इस मंत्र की परीक्षा करने का निश्चय किया। उस शाम उसने अपनी बहन शीला से कहा कि वह मैदान में खेलने जा रहा है। शीला ने ताना देते हुए कहा, "जा तो रहे हो लाट साहब, पर वापस किसके साथ आओगे ?"

अरुण बड़े विश्वास के साथ बोला, "मैं भूत-वूत से नहीं डरता हूं। एक बार जय बजरंगबली कहूंगा तो भूत दुम दबाकर भाग जाएगा।"

शीला उसकी डींग सुनकर हंस पड़ी। पास के कमरे से बड़े भैया के हंसने की आवाज भी आई। किंतु अरुण पर उनकी हंसी का कोई असर नहीं हुआ और वह मैदान में खेलने चल दिया।

घर से मैदान की दूरी आधा मील के करीब थी। रास्ता ऊबड़-खाबड़ था और बीच-बीच में कई गड्ढे भी थे। अंधेरे में उस रास्ते पर चलना बड़ा कठिन था। किंतु अरुण उस रास्ते के चप्पे-चप्पे से परिचित था और वह आंख बंद करके उस पर दौड़ लगा सकता था।

मैदान से घर लौटते समय उसने यही निर्णय किया कि आंख मींच कर एकदम दौड़ लगाएगा और घर जाकर दम लेगा। दौड़ते समय उसकी दोनों मुठ्ठियां बंद थीं और वह हनुमान चालीसा की पंक्तियां जोर-जोर से गा रहा था। वह न कहीं रुका, न उसने इधर-उधर देखा और न किसी आवाज पर ही कोई ध्यान दिया। जब कभी उसे पत्तों की सरसराहट जैसी कोई आवाज सुनाई देती तो वह मन के सारे उत्साह के साथ "जय बजरंगबली" चिल्ला उठता। उस दिन वह बिना किसी विघ्न बाधा के घर पहुंच गया।

उसके नए मंत्र की यह पहली सफलता थी। पहले तो शीला ने उसकी बात पर विश्वास ही नहीं किया। किंतु जब उसने किताब सिर पर रख कर विद्यामाता की कसम खाई तो शीला बहुत प्रभावित हुई।

इसके बाद उसके मन में भूतों का डर कम होता गया। वह उन स्थानों में जाने लगा जहां वह अब तक नहीं जाता था। अब वह दोस्तों के साथ सूरजकुंड में नहाने भी जाता था यद्यपि वहां अकेले जाने का साहस उसमें अभी तक नहीं था। इसी प्रकार वह मिसरू आम के नीचे दोपहर के समय तो जा सकता था। किंतु रात के समय जाने में उसे डर लगता था।

इसमें कोई संदेह नहीं कि वह पहले की अपेक्षा काफी निडर हो गया था। इसके साथ ही वह अब बाबा शिवदयालु की कुछ-कुछ नकल भी करने लगा था। बोलते समय वह मोटी और भारी आवाज निकालने की कोशिश करता था। चलते समय पैरों पर पूरे शरीर का भार देकर चलता था। कभी-कभी वह अपने दोस्तों को भूत से अपनी मुठभेड़ की मनगढ़ंत कहानियां भी सुनाता था। वह अपने साहस की डींग हांकने में कुशल हो चला था। एक दिन लड़कों के उकसाने पर वह बाबा शिवदयालु को ललकारने के लिए भी तैयार हो गया। सौभाग्य से वह उन दिनों कहीं बाहर गए हुए थे।

इस बीच अरुण को भी गांव के बाहर जाना पड़ा। जब नानी के घर पन्द्रह दिन रहकर वह वापस आया तो उसे संदेश मिला कि शाम को मैदान में कबड्डी का मैच होने वाला है।

उस दिन दोनों दलों में जोरों का मुकाबला था। खेल पूरे जोर से चल रहा था। रात काफी हो गई लेकिन लड़के खेल में डूबे रहे। अचानक रुनझुन की आवाज सुनाई दी। लगता था कोई पांव में घुंघरू पहन कर दौड़ा चला आ रहा है। उस आवाज को सुनकर लड़कों के कान खड़े हो गए। आवाज निकट लगी तो लड़के "आया-आया" चिल्ला कर इधर-उधर भागे। किसी के कपड़े वहीं छूट गए, किसी का जूता रह गया। देखते ही देखते मैदान खाली हो गया।

पर बेचारा अरुण क्या करता। उसने तो इस नए भूत की कल्पना ही नहीं की थी। वह खड़ा रहा भय से कांपता हुआ। "भूत पिशाच निकट नहीं आवै महावीर जब नाम सुनावै" की पंक्ति रटता

हुआ वह सोच ही रहा था कि आवाज उसके बहुत निकट आ गई। अंधेरे में उसे एक घोड़ा दिखाई दिया जिस पर बहुत बड़े सिर वाला एक भूत बैठा हुआ था। जब उसने महावीर के नाम से भी उसे भागते नहीं देखा तो वह खुद ही घर की ओर भागा। पीछे से आवाज आई "कौन हो तुम ?" किंतु अरुण ने अपनी चाल दुगुनी कर दी। भूत ने भी अपना घोड़ा उसके पीछे डाल दिया और अरुण को रुनझुन की आवाज पीछा करती हुई मालूम पड़ी।



वह बांस के झुरमुट में छिप गया। यद्यपि इस झुरमुट में भी भूत का डर था किंतु वह भूत इस नए भूत से अधिक खतरनाक नहीं था जो महावीर के नाम से भी नहीं डरता था। वास्तव में अरुण का सारा साहस जवाब दे चुका था और कोई उपाय न देखकर वह रो पड़ा। रुनझुन की आवाज झुरमुट के पास आ गई। फिर एक आवाज आई—

"कौन हो तुम ? बाहर निकलो।"

अरुण की जबान मारे डर के बंद हो गई थी। भूत अब घोड़े से उतरा और नरमी से बोला : "अरे तुम क्यों रो रहे हो ? यहां सांपों का डर है। यहां मत बैठो। चलो मैं तुम्हें घर पहुंचा देता हूं।" और भूत ने हाथ पकड़ कर उसे बाहर निकाला। अरुण ने डरते-डरते नजर ऊपर उठाई तो देखा कि भारी भरकम शरीर, रोबीला चेहरा और सिर पर बड़ी सी पगड़ी बांधे बाबा शिवदयालु सामने खड़े हैं।

"क्यों बे, क्यों रो रहा था ?" बाबा शिवदयालु ने अरुण के कान खींचते हुए कहा।

अरुण बड़ी मुश्किल से अपनी हंसी रोके हुए था। उसने कहा "बाबा मैंने समझा भूत मेरा पीछा कर रहा है।"

"भूत क्या होता है ? तुमने देखा है भूत ?" बाबा शिवदयालु ने गरम होकर कहा।

अरुण ने साहस बटोर कर कहा, "नहीं बाबा, मैंने भूत नहीं देखा है। लोग कहते हैं मिसरू आम पर पहाड़िया भूत रहता है। वह आपकी तरह सफेद कपड़े पहनता है और उसकी बड़ी-बड़ी मूंछें हैं।"

बाबा शिवदयालु ने अरुण को एक हाथ से उछालकर घोड़े की पीठ पर बिठा दिया और फिर स्वयं भी पीछे आ बैठे।

"चलो, दिखाओ कहां रहता है भूत ?" कहकर उन्होंने घोड़े को एड़ लगाई और घोड़ा मिसरू आम की तरफ भागने लगा।

कुछ ही मिनटों में वे मिसरू आम के नीचे आ गए। दोनों घोड़े से उतर पड़े। बाबा शिवदयालु ने टार्च की रोशनी फेंक कर पेड़ की एक-एक डाल को देखा किंतु अरुण को वहां कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा।

अरुण को जब पूरा यकीन हो गया कि यहां कोई भूत नहीं है तो बाबा शिवदयालु ने अरुण को जमीन पर गिरे हुए आम बटोरने का आदेश दिया। बाबा शिवदयालु से थैला लेकर अरुण ने उसे ऊपर तक भर लिया। इसके बाद दोनों घोड़े पर बैठकर वापस आ गए।

अरुण को उसके घर के पास उतार कर बाबा शिवदयालु ने कहा "ये आम ले जाओ और थैला कल सुबह हमारे घर पर दे जाना। और सुनो आज के बाद मैंने तुम्हें इतनी देर तक खेलते देखा तो ऐसे कान खींचूंगा कि भुरता बना डालूंगा।" यह कह कर उन्होंने घोड़े को एड़ लगाई और घोड़ा देखते ही देखते आंखों से ओझल हो गया।

उस दिन अरुण ने मिसरू आमों से भरा हुआ थैला दिखाकर सबको आश्चर्यचकित कर दिया। शीला तो दांतों तले अंगुली दबा कर रह गई।

पुस्तकें फाड़ने वाला भूत

घंटी की आवाज सुनते ही खेल के मैदान में भगदड़ मच गई। लड़के खेल छोड़कर अपने-अपने कमरों की ओर भागे अशोक तो "कबड्डी" कहता हुआ ही अपने कमरे में पहुंच गया। डेस्क के नीचे पड़े हुए जूते पहनने के लिए वह जैसे ही झुका, उसकी नजर अपनी पुस्तक पर पड़ी। पुस्तक औंधे मुंह पड़ी थी और उसका आधा भाग बीच से फटा हुआ था, ठीक वैसे ही जैसे हरीश, विनोद, आलोक और अतुल की पुस्तकें फटी हुई पाई गई थीं। वह चिल्ला उठा —"भूत मेरी पुस्तक फाड़ गया !"

लड़कों के तमतमाए हुए चेहरे भय के कारण एकाएक फक पड़ गए। हरीश ने अशोक के हाथ से पुस्तक ली और सुरेश के आगे करते हुए बोला, "सुरेश, क्या तुम अब भी नहीं मानते कि यह किसी भूत का काम है ?"

सुरेश कुछ उत्तर नहीं दे सका, लेकिन दिल से वह अब भी यह मानने के लिए तैयार नहीं था कि आधी छुट्टी के समय इस कमरे में कोई भूत आता है, जो लड़कों की पुस्तकें फाड़ जाता है।

पिछले दस-बारह दिनों में कई लड़कों की पुस्तकें फट चुकी थीं। सबसे पहले हरीश की पुस्तक फटी हुई पाई गई थी। हरीश हैडमास्टर साहब का लड़का था और सब पर उसका दबदबा था। कोई लड़का उसकी पुस्तक फाड़ने की हिम्मत नहीं कर सकता था। कक्षा में एक-दो लड़के अवश्य ऐसे थे, जो कभी-कभी अपनी पुस्तक का हवाला देकर हरीश को "बंदरों का राजा" कह दिया करते थे। किंतु उन पर किसी को पुस्तक फाड़ने का शक नहीं हो सकता था।

दो दिन बाद विनोद की पुस्तक भी उसी तरह बीच से फटी हुई पाई गई। जब हैडमास्टर के पास खबर पहुंची, तो उन्होंने रामबहादुर चपरासी को आज्ञा दी कि वह आधी छुट्टी के समय कमरे की निगरानी रखे। रामबहादुर को भूत-प्रेतों पर बड़ा विश्वास था। इसलिए जब दो दिन बाद उसके होते हुए भी आलोक की पुस्तक फटी हुई पाई गई, तो उसने जोर-जोर से कहना शुरू किया कि इस कमरे में कोई भूत आता है। लड़कों को भी उसकी बात पर विश्वास हो गया। लेकिन सुरेश नहीं माना। अगले दिन अतुल की पुस्तक फाड़ी गई और आज अशोक की पुस्तक का भी वही हाल हुआ।

किंतु सुरेश अब भी भूत वाली बात मानने के लिए तैयार नहीं था। यद्यपि वह हरीश की बात का कोई उत्तर नहीं दे सका। जवाब में शायद वह कुछ कहता, लेकिन तभी समाज-विज्ञान के अध्यापक कमरे में आ गए। एक और पुस्तक फटने की बात सुनकर मास्टरजी ने भूत-प्रेत के अंध-विश्वास के विरुद्ध एक लेक्चर झाड़ डाला और फिर पढ़ाने में लग गए।

उस दिन छुट्टी के बाद सुरेश की दूसरे लड़कों से फिर बहस छिड़ गई। सुरेश जोश में आकर बोला— "अगर पुस्तकें फाड़ने वाला भूत है, तो मैं उस भूत को पकड़कर सबके सामने पेश करूंगा, चाहे इसके लिए मुझे कितना भी खतरा क्यों न उठाना पड़े।" कुछ लड़के उसकी बात सुनकर मुस्करा दिए। किंतु कुछ लड़के ऐसे भी थे जो यह जानते थे कि सुरेश जो कुछ कहता है, उसे करके दिखा देता है। उन्होंने सुरेश को हिम्मत दिलाई।

शाम को सुरेश एकांत में बैठकर इस समस्या पर विचार करता रहा। भूत-प्रेतों की उसने कई कहानियां पढ़ी और सुनी थीं। वास्तव में जासूसी कहानियों के बाद उसे भूत-प्रेतों की कहानियां ही अच्छी लगती थीं और भूत-प्रेतों को वह कथा-कहानियों की चीज ही मानता था। फिर भी फटी पुस्तकों की घटनाओं ने उसे चक्कर में डाल दिया था।

उसने कक्षा के सभी लड़कों पर बारी-बारी से विचार किया, किंतु किसी भी लड़के पर उसे शक नहीं हुआ। फिर अचानक उसके दिमाग में बिजली की तरह एक विचार आया —"भूत-प्रेतों के नियम बड़े पक्के होते हैं। उनसे वे तिलभर इधर-उधर नहीं होते हैं।"

इस विचार के आते ही वह विनोद के घर की ओर भागा। उस समय अंधेरा घिरने लगा था। ऐसे में सुरेश को अपने यहां देखकर विनोद अचम्भे में पड़ गया। किंतु सुरेश ने ज्यादा बातचीत नहीं की। विनोद से फटी हुई पुस्तक मांगकर वह अतुल के घर की ओर भागा। इसी तरह उसने हरीश, आलोक, अशोक की फटी हुई पुस्तकें भी प्राप्त कर लीं।

अब वह अपने पढ़ने के कमरे में दरवाजा बंद करके बैठ गया। पांच फटी हुई पुस्तकें उसके सामने पड़ी थीं। पहले उसने हरीश की पुस्तक उठाई। उसके पहले तीस पन्ने फटे हुए थे। विनोद की पुस्तक के पहले पचास पन्ने फटे हुए थे। इसी तरह अतुल के बीस, आलोक के पैंतीस और अशोक के चालीस पन्ने फटे हुए थे। इस प्रकार मिलान करने के बाद सुरेश इस नतीजे पर पहुंचा कि पुस्तकें फाड़ने वाला कोई लड़का ही है, भूत नहीं। भूत होता तो सब किताबों के बराबर पन्ने फाड़ता, क्योंकि वह अपने नियम का बड़ा पक्का होता है।

दूसरे दिन स्कूल लगने के पहले ही उसने यह बात कुछ लड़कों को बताई तो वे मानने के लिए तैयार हो गए। किंतु हरीश को मनवाना आसान नहीं था। जब वह कमरे में आया, तो सुरेश से बहस करने लगा। किंतु जब सुरेश ने बताया कि यदि भूत ने पुस्तकें फाड़ी होतीं, तो सभी पुस्तकों के एक से पन्ने फटे होने चाहिए थे, तो हरीश से कोई उत्तर नहीं बन पड़ा। लड़कों के सामने सुरेश से हार कर उसका चेहरा उतर गया। थोड़ी देर बाद वह जोश में भरकर बोला—"अगर यह किसी लड़के की शरारत है, तो वह लड़का कौन है ?"

सुरेश बोला—"अभी इस बात का उत्तर देना कठिन है। लेकिन मैं उसका पता लगाऊंगा और बहुत जल्दी ही लगाऊंगा।"

दिन भर सुरेश के दिमाग में यही बात घूमती रही। शाम को घर जाकर वह अपने कमरे में एकांत में बैठकर इसी पर विचार करता रहा। शायद उस रात सपने में भी उसने यही काम किया होगा।

दूसरे दिन जब सब लड़के प्रार्थना के लिए स्कूल के सहन में जमा हुए, तो सुरेश चुपचाप वहां से खिसककर चपरासी रामबहादुर के पास जा पहुंचा। रामबहादुर कोठरी में बैठा बीड़ी पी रहा था। सुरेश को देखकर उसने बीड़ी फेंक दी और उठ खड़ा हुआ, शायद यह सोचकर कि हैड मास्टर साहब ने उसे बुलाया है किंतु सुरेश उसके पास बैठता हुआ बोला, "रामबहादुर, मैं किताबें फाड़ने वाले लड़के का पता लगाना चाहता हूं, क्या मेरी इसमें मदद करोगे ?"



रामबहादुर पहले तो यही मानने के लिए तैयार नहीं हुआ कि यह किसी लड़के की शरारत है, किंतु बाद में सुरेश के समझाने पर वह उसके सवालों के जवाब देने के लिए तैयार हो गया। सुरेश ने पूछा— "उस दिन जब तुम आधी छुट्टी के समय कमरे का पहरा दे रहे थे, तो क्या कोई लड़का कमरे में आया था ?"

"कोई नहीं।"

"क्या कमरे के बाहर कोई लड़का टहलता हुआ दिखाई दिया था।"

"हां-हां, बहुत से लड़के बाहर टहल रहे थे।"

"मेरा मतलब ऐसा लड़का जिस पर शक किया जा सके ?"

"मुझे तो किसी लड़के पर शक नहीं होता।"

"कोई ऐसा लड़का जो छिपछिपकर तुमको देख रहा हो ?"

"कोई नहीं।"

"क्या उस दिन तुम बीच में उठकर कहीं गए थे ?"

"बिल्कुल नहीं।"

"हां... हां, एक मिनिट के लिए मैं..."

सुरेश का चेहरा उत्साह से चमक उठा। उसने आगे पूछा, "एक मिनिट के लिए कहां गए थे ?"

एक लड़के ने मुझसे आकर कहा था कि हैडमास्टर साहब के कमरे से घंटी की आवाज आ रही है। मैं भागकर वहां गया, लेकिन हैडमास्टर साहब बाहर जा चुके थे।"

सुरेश ने दाएं हाथ की मुट्ठी बाईं हथेली पर मारते हुए पूछा, "कौन था वह लड़का ?"

"नाम तो नहीं जानता, लेकिन एक पतला सा भोला-भाला सा लड़का था।"

"अतुल, महेश, आलोक ? याद कर लो नाम उसका।"

"वह सबसे आगे बैठता है।"

"ओह! रामू ?"

"हां... हां, शायद रामू ही नाम है उसका।"

सुरेश प्रसन्न हो गया। अब वह रामबहादुर से क्षमा मांगकर अपने कमरे की ओर चला। "रामू... रामू ने ऐसा क्यों किया ? ठीक, कमजोर होने के कारण वह लड़कों के साथ खेलता-कूदता नहीं। लड़के बात-बात पर उसे पीट देते हैं और वह उनका विरोध नहीं कर पाता। किंतु भीतर ही भीतर वह उनसे नाराज रहता है। वह उनसे बदला लेना चाहता है। इसीलिए उनकी पुस्तकें फाड़ने में उसे बड़ा मजा आता है।"

यही सोचता-सोचता सुरेश अपने कमरे में आ गया। प्रार्थना अभी चल रही थी। कमरे में अकेले रामू को बैठा देखकर वह चौंक पड़ा। रामू भी सुरेश को देखकर सकपका गया। सुरेश ने पूछा, "रामू, तुम प्रार्थना करने नहीं गए।"

रामू कुछ डरते-डरते बोला, "मैंने घर का काम पूरा नहीं किया था। सोचा, यहीं कर डालूं।"

सुरेश ने कुछ सख्ती से पूछा, "घर का काम या और कुछ ?"

रामू कुछ नहीं समझ सका, इसलिए वह सुरेश की ओर देखता रहा।

सुरेश ने जरा और कड़ी आवाज में कहा, "देखो, दूसरों को बेवकूफ मत बनाओ। सच-सच बताओ, तुम लड़कों की पुस्तकें क्यों फाड़ते हो ?"

रामू से कोई उत्तर नहीं बन पड़ा और वह रो पड़ा।

"रोने से काम नहीं चलेगा रामू। यदि तुम सच-सच बता दोगे, तो मैं इस मामले को हैडमास्टर साहब के आगे नहीं रखूंगा।"

रामू रोते-रोते बोला, "सुरेश भैया, मैंने किसी की पुस्तक नहीं फाड़ी मैं विद्या की कसम खाकर कहता हूं। मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता।"

"अच्छा तो उस दिन तुमने रामबहादुर को झूठमूठ क्यों बताया कि हैडमास्टर साहब के कमरे से घंटी की आवाज आ रही है ?"

रामू कुछ याद करके बोला, "मुझे तो हरीश ने बताया था। मैं कुछ नहीं जानता।"

सुरेश के सारे किए-कराए पर पानी फिर गया, तभी प्रार्थना करके लड़के कमरे में आने लगे। बैंच की तड़ाक-फड़ाक की आवाजों से कमरा गूंजने लगा। किंतु इस शोर-गुल में भी सुरेश अपने विचारों में ही डूबा था। तभी हरीश और अतुल में मार-पीट होने लगी। लड़कों ने दोनों को अलग किया, तो हरीश दांत पीसते हुए बोला, "अब मुझे कभी बंदर कहा, तो मार मारकर भुरता बना दूंगा।"

अतुल बोला, "बंदर मैंने तुम्हें नहीं कहा। मैं तो पाठ याद कर रहा था। पुस्तक में लिखा है- हरीश माने बंदरों का राजा।"

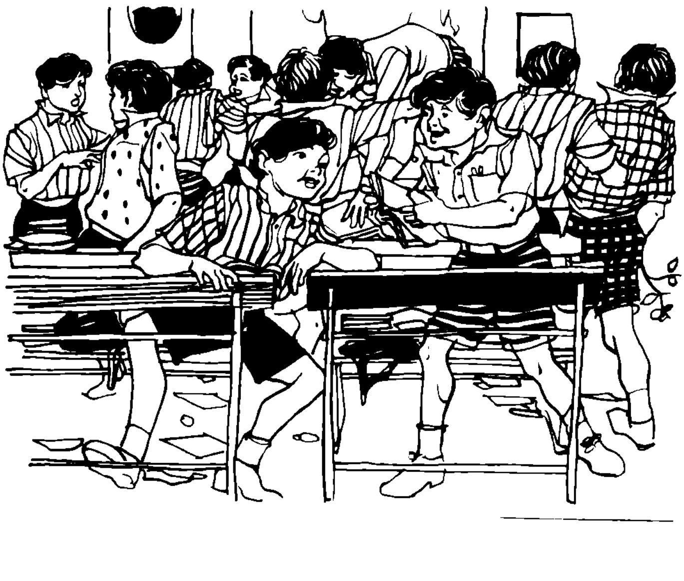
"अच्छा बच्चू, आधी छुट्टी में चखाऊंगा मजा।"

मास्टरजी के कमरे में आते ही उनकी लड़ाई बंद हो गई। सुरेश के दिमाग में अब भी उनकी बातें घूम रही थीं। पांचों फटी हुई पुस्तकें उसके बस्ते में पड़ी हुई थीं। जब मास्टरजी से पढ़ने को निकालनी चाही, तो उसके हाथ हरीश वाली पुस्तक आई। सुरेश हरीश को याद करके मुस्करा दिया। फिर उसने वह पुस्तक बस्ते में रख दी और गणित की पुस्तक निकाल ली, क्योंकि पहला घंटा गणित का था।

लड़कों को विश्वास था कि आधी छुट्टी के समय हरीश और अतुल की फिर लड़ाई होगी। इसलिए वे घंटी बजते ही मैदान की ओर तमाशा देखने के लिए भागे। अतुल की मदद के लिए तीन-चार लड़के तैयार हो गए थे।सुरेश भी लड़ाई का तमाशा देखने के लिए बाहर निकलने लगा, तो वह अतुल की बेंच से टकरा गया। बेंच पर नीली स्याही से भरी दवात थी, जो सुरेश के धक्के से नीचे गिर पड़ी। बेंच के आस-पास नीली स्याही फैल गई।

मैदान में लड़के हरीश की राह देख रहे थे, किंतु वह अभी तक नहीं आया था। सुरेश ने अनुमान लगाया कि हरीश खाना खाने घर गया होगा। हैडमास्टर साहब का मकान स्कूल के साथ ही लगा हुआ था। कक्षा के कमरे में खड़े होकर खिड़की से उनका बरामदा दस-बाहर फुट दूर ही लगता था। उसका अनुमान सही था। हरीश खाना खाने गया था, इसलिए वह मैदान में पन्द्रह मिनिट बाद पहुंचा। अतुल के साथ चार-पांच लड़के देखकर शायद उसने झगड़ा मोल लेना ठीक नहीं समझा। वह महेश और कृपाल के साथ बातें करता हुआ टहलने लगा। दूसरे लड़के भी अपने-अपने खेल में लग गए।

किंतु आधी छुट्टी के बाद जब लड़के कमरे में आए, तो वहां एक और पुस्तक फटी हुई मिली। अब की बार अतुल की पुस्तक फटी थी।



हरीश और अन्य दो-तीन लड़कों ने फिर सुरेश को घेर लिया। पहले तो सुरेश गम्भीर बना रहा, किंतु जब वे लोग खूब जोश में आ गए, तो वह बोला, "अगर तुम अपराधी को देखना चाहते हो, तो छुट्टी के बाद मैदान में जमा हो जाना।"

छुट्टी के बाद कक्षा के सभी लड़के मैदान में जमा थे।

सुरेश ने कहना शुरू किया- "दोस्तों, अपराधी का पता मैंने लगा लिया है। वह कोई भूत नहीं, हमारे बीच का एक लड़का है। किंतु मैं चाहता हूं कि वह लड़का स्वयं ही अपना अपराध स्वीकार कर ले।"

सब लड़के एक दूसरे की ओर देखने लगे। जब कोई आगे नहीं बढ़ा, तो सुरेश ने हरीश की कमीज का कालर पकड़ते हुए कहा, "यही है पुस्तकें फाड़ने वाला भूत।"

हरीश क्रोध में बोला — "तुम कैसे कह सकते हो ?"

सुरेश ने उसके कैनवास के जूतों की ओर इशारा करते हुए कहा, "मैं नहीं, ये बताते हैं।"

सबने देखा कि हरीश के सफेद जूतों का निचला कुछ भाग नीली स्याही से रंगा हुआ था।

सुरेश बोला—"पुस्तक फाड़ने के बाद तुम खिड़की के रास्ते कूदकर अपने घर चले गए थे। इसीलिए नीली स्याही के निशान खिड़की पर भी हैं और खिड़की से दिखाई पड़ने वाले तुम्हारे घर के बरामदे में भी।"

हरीश का चेहरा सफेद पड़ गया था। महेश बोला, "लेकिन पुस्तक तो हरीश की भी फटी है ? क्या इसने स्वयं ही अपनी पुस्तक फाड़ी थी ? और दूसरों की पुस्तकें इसने क्यों फाड़ी ? उनसे तो हरीश का झगड़ा नहीं था।"

सुरेश ने बस्ते से हरीश की फटी पुस्तक निकालकर सबको दिखाई "हरीश को बंदरों के राजावाले पाठ से चिढ़ थी। इसी पाठ पर क्रोधित होकर इसने अपनी पुस्तक फाड़ी थी। क्यों हरीश, मेरा अनुमान सही है न ?"

हरीश का गला सूख गया था। किंतु उसने अपना अपराध स्वीकार करते हुए कहा, "सुरेश भैया, तुम्हारा अनुमान सही है, किंतु पिताजी को मत बताना कि..."

सुरेश बोला, "यह बात हम लोगों के बीच ही रहेगी हरीश, लेकिन यह बता दो कि तुमने दूसरे लड़कों की पुस्तकें क्यों फाड़ डाली ?"

हरीश कुछ देर चुप रहा, फिर बोला, "मैंने पिताजी से एक बार झूठ कह दिया कि किसी लड़के ने मेरी पुस्तक फाड़ दी है। अपनी बात रखने के लिए मैं यह बताना चाहता था कि उस शरारती लड़के या भूत ने दूसरे लड़कों की पुस्तकें भी फाड़ी हैं। मैं अपने जेब-खर्च से उनका नुक्सान भर दूंगा।"

सुरेश ने कहा, "अच्छा अब इन बातों को छोड़ो, चलो।" और वह हरीश के कंधे पर हाथ रखकर चलने लगा! लड़के धीरे-धीरे तितर-बितर हो गए।

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

